आपने लिखा

संदर्भ का देरी से मिलना बहुत खलता है फिर भी बेसब्री से इंतज़ार रहता है क्योंकि हर अंक में पढ़ने के लिए काफी सामग्री रहती है। अंक 19 में मुखपृष्ठ काफी आकर्षक था। फोटोक्रोमिक कांच के बारे में काफी दिलचस्प बातें पता चलीं। उम्मीद है संदर्भ के पाठकों की संख्या में निरंतर वृद्धि होती रहेगी।

अजय नेमा
शुजालपुर, मध्य प्रदेश

मैं संदर्भ का काफी समय से पाठक हूं। एक शिक्षक होने के नाते शिक्षा के विविध मुद्दों में मेरी रुचि रहती है। मेरी कुछ शंकाओं को संदर्भ पत्रिका ने शांत भी किया है।

मैं अपनी एक छोटी-सी समस्या यहां रख रहा हूं – ज़िला शिक्षा केन्द्र ककरवाह, ज़िला टीकमगढ़ के चौदह विद्यालयों में नौ शिक्षक और चार अधिकारी हैं। मैं जानना चाहता हूं कि यहां पंद्रह सौ बच्चों को हम नौ शिक्षक कैसे पढ़ाएं? जबकि साथ में अन्य गैर शैक्षणिक कार्य भी हैं! गिजुभाई और जॉन हॉल्ट की किताबें पढ़कर तो कोई समाधान नहीं पा सका। संदर्भ में तो आमतौर पर ऐसे मुद्दों पर सामग्री कम ही होती है।

संदर्भ को शिक्षकों की पत्रिका बनाइए। द्वैमासिक की जगह चाहे अर्धवार्षिक बनाएं, परन्तु इसमें शिक्षा एवं शिक्षकों से गहरा जुड़ाव अवश्य होना चाहिए।

जे. बी. एस. हाल्डेन की आत्मा बेहद दुखी हुई होगी जब उसने संदर्भ के पिछले अंक में के. आर. शर्मा के लेख में अंडे को फोड़ने वाला प्रयोग पढ़ा होगा, जबकि हाल्डेन खुद जानवरों पर किए जाने वाले प्रयोगों-परीक्षणों के विरोधी थे।

अजित जैन 'जलज'
ककरवाह, ज़िला टीकमगढ़, मध्य प्रदेश

यह कहना कि हाल्डेन जानवरों पर किए जाने वाले प्रयोगों के खिलाफ थे, उचित नहीं होगा। बतौर जानकारी हम बताना चाहेंगे कि हाल्डेन ने काफी प्रयोग खुद अपने शरीर पर किए थे। हाल्डेन की इंग्लैंड में अपनी एक 'प्राणी प्रयोगशाला' भी थी जिसमें वे लगातार प्रयोग करते थे। जब हाल्डेन रहने के लिए भारत आए तो अपनी 'एनिमल लैब' भी साथ लेकर आए थे।

– संपादक मंडल

अंक 19 काफी लंबे अंतराल के बाद मिला, पर खुशी है कि इसकी गुणवत्ता अभी भी कायम है।

'वो विज्ञान दिवस' में आमोद जी का यह कहना कि विज्ञान के प्रयोगों के लिए बड़े-बड़े उपकरणों और भव्य प्रयोग शालाओं की ज़रूरत नहीं होती उचित है। लेकिन दुख की बात तो यह है कि शिक्षक ऐसे ढर्रे में या तो रम गए हैं या ढाल दिए गए हैं कि हम महज पाठ्य पुस्तकों पर ही अवलंबित हो गए हैं। जब सारे प्रयोग और निष्कर्ष पढ़ने से ही पता चल जाते हैं तो फिर ज़्यादा माथा-पच्ची कौन करे? अतः मेरा मानना है कि प्रारंभिक शिक्षा में भाषाई

काश ! मुझे मौका तो देते

मैं तमिल भाषी हूं लेकिन संदर्भ पढ़ने की कोशिश करती हूं। वृषाली वैद्य का लेख पढ़ने के बाद मैं अपने स्कूली दिनों की एक घटना सबके साथ बांटना चाहती हूं।

बात उन दिनों की है जब नवमीं कक्षा में पढ़ती थी। मुझे वॉलीबॉल खेलना बहुत अच्छा लगता था और मैं थोड़ा-बहुत खेल भी लेती थी। उन दिनों हमारी स्कूल को इंटर स्कूल खेलों में खेलने का मौका मिला था। हमारे पी.टी. शिक्षक ने कहा, "वॉलीबॉल के लिए टीम बनाना है। हरेक कक्षा से एक -दो खिलाड़ी भेजना चाहिए।" कक्षा नवमीं में चार सेक्शन थे – ए, बी, सी और डी। मेरा सेक्शन 'डी' था। सेक्शन 'ए' अंग्रेज़ी मीडियम था। उस कक्षा में काफी अच्छे खिलाड़ी थे क्योंकि उस क्लास के काफी बच्चे स्कूल के पास ही रहते थे। इस कारण उन्हें स्कूल के मैदान में खेलने के लिए काफी समय मिल जाता था। मेरा घर स्कूल से काफी दूर था। मुझे दो बस बदलनी पड़ती थी तब कहीं स्कूल पहुंच पाती थी।

सेक्शन 'ए' में से एक लड़की ने सर से कहा, "हम लोग दो खिलाड़ी भेजेंगे। 'बी' और 'सी' सेक्शन एक-एक खिलाड़ी को भेज सकते हैं, लेकिन 'डी' सेक्शन में तो कोई अच्छा खिलाड़ी नहीं है। इसलिए .....।" मैंने अपने खेल शिक्षक से कहा, "मुझे थोड़ी और ट्रेनिंग दीजिए। मैं अच्छा वॉलीबॉल खेल सकती हूं। लेकिन मेरी बात नहीं सुनी गई। मुझे टीम में जगह नहीं मिली।"

इस घटना ने मुझे हिलाकर रख दिया। न जाने कितने ही लोग ऐसे ही अन्याय के शिकार होते होंगे। उसके बाद मैं कोशिश करने लगी कि किसी भी काम को इतने अच्छे से करूं कि उसमें कम-से-कम गलतियां हों। ऐसा करने में मुझे काफी कोशिश करनी पड़ती है। मगर सोचती हूं कि मैं ऐसे ही सफलता प्राप्त करूंगी।

जे. श्रीदेवी
तिरुवनमियूर, चेन्नई

विषयों को छोड़कर अन्य विषय जैसे विज्ञान, गणित, सामाजिक अध्ययन आदि की पाठ्य पुस्तकें हटा दी जानी चाहिए। बस सबको समान पाठ्यक्रम या पाठ्यचर्या उपलब्ध करवा दी जानी चाहिए तथा शिक्षकों को स्वयं स्वाध्याय एवं प्रयोग करने के लिए प्रेरित करना चाहिए।

मुझे बड़ा दुख होता है जब मैं दसवीं कक्षा के छात्रों से पूछता हूं कि क्या विज्ञान विद्यालय के बाहर काम आता है? और वे जवाब चुप्पी से देते हैं।

विज्ञान महज एक रटने वाली सामग्री बना दी गई है।

वृषाली वैद्य का अनुभव 'सज़ा' जैसी घटनाएं तो आज सभ्य और खुले समाज में काफी हो रही हैं क्योंकि हर कोई अपनी ही तराज़ू को सही मान रहा है।

श्रीनिवासन जी ने आर्किमिडीज़ के सिद्धांत पर काफी लंबी माथा-पच्ची की है पर यह समझ नहीं आया कि इसे मान्यता मिलनी चाहिए या नहीं?

स्वामी सहजानंद का निबंध प्रेरणादाई लगा। जे.बी.एस. हाल्डेन की कहानी काफी रोचक लगी। क्या हाल्डेन की कहानियों का कोई हिन्दी संग्रह भी मिलता है? कृपया सूचित कीजिए।

रमेश जांगिड़
ग्राम भिरानी, हनुमानगढ़, राजस्थान

एम. श्रीनिवासन के लेख का केन्द्रीय बिन्दु 'आर्किमिडीज़ के सिद्धांत' पर सवाल उठाना नहीं था – वह सिद्धांत तो एकदम वाजिब और सही है। यह तथ्य भी सही है कि इस सिद्धांत को आर्किमिडीज़ ने ही पहली बार समझा और प्रस्तुत किया।

एम. श्रीनिवासन ने इस मान्यता पर सवाल उठाया था कि राजा के मुकुट में मिलावट पता करने के लिए आर्किमिडीज़ के सिद्धांत की ज़रूरत थी क्या? मुकुट में मिलावट पता करने के लिए शायद आर्किमिडीज़ और बहुत से आसान तरीके अपना सकता था।

– संपादक मंडल

शैक्षिक संदर्भ का 19वां अंक मिला। लगभग सभी लेख काफी सरल और रोचक तरीके से लिखे हुए हैं। लेखों में विविधता होने के साथ-साथ वैचारिक गहराई भी है, जो एक अहम पहलू है।

मैं खुद तीस वर्ष डी. एड. कॉलेज में पढ़ाने के बाद सेवानिवृत हुई हूं इसलिए संदर्भ जैसी पत्रिका की शैक्षणिक अहमियत से बखूबी वाकिफ हूं।

आमोद कारखानिस का विज्ञान दिवस का अनुभव काफी सहज होने के बाद भी चिंतित करता है – यदि बंबई की स्कूल में ऐसे हालात हैं तो गांव-देहात की स्कूलों के बारे में क्या कहा जाए? अपने स्कूली दिन याद करती हूं तो ग्यारहवीं कक्षा तक प्रयोगों से विज्ञान सीखने की बात याद नहीं आती। निश्चित ही उस समय तक शिक्षक और विद्यार्थियों को विज्ञान में प्रयोगों की अहमियत का पता न था।

'क्या अंडा सांस लेता है' – लेख पढ़ने के बाद मैं सोचने लगी कि इतने सालों में यह सवाल मेरे दिमाग में क्यों नहीं कौंधा।

जे.बी.एस. हाल्डेन की जीवनी और 'किसान कैसे लड़ते थे' लेख भी काफी रोचक लगे। मुझे संदर्भ के अगले अंक का इंतज़ार रहेगा।

उज्जवला केलकर
चव्हाण कॉलोनी, सांगली, महाराष्ट्र